पण्डित श्री सरयू प्रसाद शास्त्री द्विवेदी

महान् ज्योतिषाचार्य एवं तत्राचार्य पण्डित श्री सरयूप्रसाद जी का जन्म संवत् १८९२ में अयोध्या नगरी से पश्चिम दिशा की ओर स्थित आठ कोस दूरी पर वाशिष्ठी सरयू नदी के दक्षिण तट पर 'सनाह' नामक ग्राम में हुआ था । आपका दीक्षा नाम सरस्वत्यानंदनाथ था। इनके पिता का नाम पण्डित राधाकृष्ण था। सरयूप्रसाद काश्यप गोत्रीय सरयूपारीय ब्राह्मण थे। आपकी उपाख्या द्विवेदी थी। आप शुक्ल यजुर्वेद की माध्यान्दिनी शाखा के अनुयायी थे। आपने अपनी शिक्षा अपने जन्म स्थान पर ही अन्य विद्वानों तथा घर पर ही अपने पिता से व्याकरण और ज्योतिष आदि विषयों का विधिवत अध्ययन किया था। पिता का स्वर्गवास होने बाद आप संवत् १९११ में पश्चिम दिशा की ओर यात्रा पर निकले और दैववश धीरे धीरे पेशावर तक भ्रमण करते चले गये। वहां से परिभ्रमण करते हुए जालंधर पीठ के पास 'कांगड़ा' नामक नगर मे पहुँचे। वहां इन्होने घर की चिन्ता को छोड़कर संस्कार वश श्रीमान् दुर्गानन्द जी से मन्त्रदीक्षा ग्रहण की और अयाचित व्रत धारण करके मुनिवृत्ति से साढ़े छः वर्ष तक तपस्या की। इधर उधर से इनकी सूचना को प्राप्त कर इनकी पत्नी इनको घर वापिस लाने को जब इनके पास गई, तब आप गुरु जी की आज्ञानुसार अपनी पत्नी के साथ अपनी जन्मभूमि पर वापिस आये। वहाँ आकर भी पवित्र और एकान्त स्थानों में देवाराधना करते हुये अपना समय व्यतीत किया। आपको एक पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई जो पण्डित दुर्गा प्रसाद द्विवेदी के नाम से विख्यात रहे और संस्कृत कॉलेज जयपुर के प्राचार्य भी रहे हैं।

आप भगवान शिव तथा चंडिका व दुर्गा देवी के अनन्य उपासक रहे हैं। नवल किशोर प्रेस लखनऊ के संस्थापक श्री नवल किशोर जी ने जब आपके विषय में सुना तो आपकी विद्वता से प्रभावित हुए तथा आपको लखनऊ ले आए। कुछ दिनों के बाद लखनऊ के अनेकों स्थानों पर भ्रमण करते हुए गोमती नदी के पास ही 'चण्डी' चांदनकूँडा' नाम से प्रसिद्ध एक जङ्गल में ही निवास करने का विचार किया। वहां यथासमय रहते हुए चण्डी देवी का जो मूर्तिरहित पुराना चबूतरा था उस पर इन्होने महिष- मर्दिनी देवी की मूर्ति स्थापित की।। आज उस स्थान पर प्रतिमास अमावस के दिन प्रायः हजारों की संख्या में लोग माँ चण्डी देवी जी के दर्शन करने के लिये आते हैं।

मुंशी नवलकिशोर ने आप को अपने यहां रहने के लिए प्रार्थना की। तब आपने शहर के बाहर 'बादशाहबाग' नामक बगीचे में दो वर्ष तक निवास किया और वहीं पर 'संग्रह शिरोमणि' नामक ज्योतिष विषयक और 'सदाचारप्रकाश' नामक धर्मशास्त्र विषयक ग्रन्थों की रचना की जो ईस्वी सन् १८७५ और १८८३ में नवल किशोर प्रेस से ही प्रकाशित हुए थे। उस समय मुंशी जी का कारखाना साधारण था लेकिन इन ग्रंथों का प्रकाशन करने के बाद उन्नति को प्राप्त हुआ और स्वयं सी. आई. ई. पद के भागी हुए। उसके बाद प्रसंगवश संवत् १९३२ में मुंशी जी ने आप का परिचय जयपुर के महाराजाधिराज श्री १०८ सवाई रामसिंहजी से कराया। महाराज साहब ने इनकी ख्याति से प्रभावित हो कर अपने राज्य में आश्रय दिया। उस समय से आप संवत् १९५१ तक वहीं रहे और आगमरहस्य, पुरुषार्थकल्पद्रुम, सप्तशती सर्वस्व, परशुरामसूत्रवृत्ति आदि ग्रन्थों की रचना की। आगमरहस्य के आदि में-

जीव्याज्जयपुराधीश रामसिंहाह्वयो नृपः।
यद्भुजच्छायमाश्रित्य शान्तो मे भूभ्रमक्लमः॥

इस प्रकार आपने अपनी रचना में जयपुर नरेश की प्रशंसा की है। जयपुर नरेश ने आपको समय समय पारितोषिक प्रदान कर आपको सम्मानित भी किया। इसके बाद आपने बदरिकाश्रम आदि तीर्थों की यात्रा भी की थी।

एक समय अफ़ीम कमीशन के प्रसङ्ग से दरभङ्गा के स्वर्गवासी महाराज लक्ष्मीश्वरसिंह जब जयपुर गये तब वहां आप की प्रशंसा सुन कर आपको एकांत एकान्त में बुलाकर आप से कई प्रकार के तन्त्रविषयक प्रश्न किये। आपके द्वारा दिए गए उत्तरों से अत्यंत प्रसन्न और सन्तुष्ट हुये और आपको दरभङ्गा आने के लिए विनम्र निवेदन किया। जब कुछ दिनों तक आप नहीं गये तब महाराज ने पत्र, तार के माध्यम से आपको संदेश भेजे। तब आप ने जयपुर महाराजाधिराज श्री १०८ करनेल सर सवाई माधवसिंह जी, की आज्ञा से अपने पुत्र पं० दुर्गाप्रसाद द्विवेदी को राजकीय संस्कृत पाठशाला में अध्यापक नियुक्त करके दरभङ्गा चले गये। वहां जाकर महाराज के आश्रय में प्रायः दो वर्ष व्यतीत किये और वहीं पर प्रत्यभिज्ञादर्शन का सारभूत शक्तिदर्शन नामक ग्रन्थ का सङ्कलन किया। उन्हीं दिनों में जल - वायु के विकार से आपका शरीर बहुत कृश हो गया था।

इसी अवसर पर बाराबंकी जिले के अन्तर्गत लाखूपुर के ताल्लुकेदार श्रीमान् सर्वजीतसिंह जी ने आपको अपने देश में रहने के लिए दरभङ्गा अपना एक दूत भेजा। उस समय दरभङ्गा - महाराज कहीं बाहर गये थे। पर आप वहां से प्रस्थान कर गए और देश में पहुँच कर अपने 'पण्डितपुरी' नामक आश्रम में निवास किया जो अयोध्या की आधुनिक सीमा से पश्चिम दिशा में प्रायः आठ कोस दूरी पर रामायण के अनुसार अयोध्या के अन्तर्गत है और वहां पर अपने लघु-भ्राता पण्डित नन्दकिशोर जी के द्वारा विन्ध्याचल के पत्थरों का एक छोटा शिवमन्दिर बनवाया और उसमें शिव-पार्वती की मूर्ति स्थापित की। यही एक पुस्तकालय भी स्थापित किया था। बस इसी स्थान में सानन्द देवाराधन में काल- व्यतीत करने लगे और ललिता सहस्र नाम की व्याख्या, दीक्षापद्धति तथा अन्यान्य कई स्तोत्रों की व्याख्यायें की। आगमोक्त तांत्रिक दीक्षा पद्धति को परिष्कृत कर व्यावहारिक रूप में प्रस्तुत किया।

कालक्रम से आहार छूटने लगा और कुछ दिनों में केवल गोदुग्ध मात्र का सेवन करने लगे। बाद में शरीर अतिक्षीण हो गया। तब आप ने भूमि पर अपना आसन कर लिया और यथा संभव दान आदि करने लगे। अन्त में संवत् १९६३ कार्तिक कृष्ण ६ सोमवार को सायंकाल सूर्यास्त के समय प्राणायाम द्वारा इस शरीर का त्याग कर ब्रह्म भाव की प्राप्ति की। आपके पुत्र महामहोपाध्याय दुर्गा प्रसाद द्विवेदी तथा पौत्र श्री गिरिजा प्रसाद द्विवेदी तथा प्रपौत्र गंगाधर द्विवेदी उल्लेखनीय विद्वान रहे हैं।

आपके द्वारा रचित ग्रंथ *

१. संग्रह शिरोमणि　　२. सदाचार प्रकाश　　३. वर्णबीज

प्रकाश

४. सप्तशती सर्वस्व　　५. मातृका स्तुति　　६. पादुका पंचकम्

७. सर्वार्थ कल्पद्रुम　　८. परशुराम सूत्रवृत्ति　　९. साधक सर्वस्व

१०. दीक्षा पद्धति　　११. ललिता सहस्रनाम वृत्ति

वर्तमान में गणगौरी बाजार जयपुर में स्थित सरस्वती भवन में श्री सरयू प्रसाद द्विवेदी जी निवास करते थे तथा इसी के पास स्थित श्री वीरेश्वर भवन में रहने वाले श्री वीरेश्वर शास्त्री जी इनसे विद्या प्राप्त करने के लिए जाते थे।